प्रकाशन तिथि : 26 जुलाई 2015, मूल्य 2 रुपये, वर्ष 34, अंक 1, कुल पृष्ठ 36

# वीतराग-विज्ञान

( पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट का मुखपत्र )

सम्पादक :
डॉ. हुकमचंद भारिल्ल

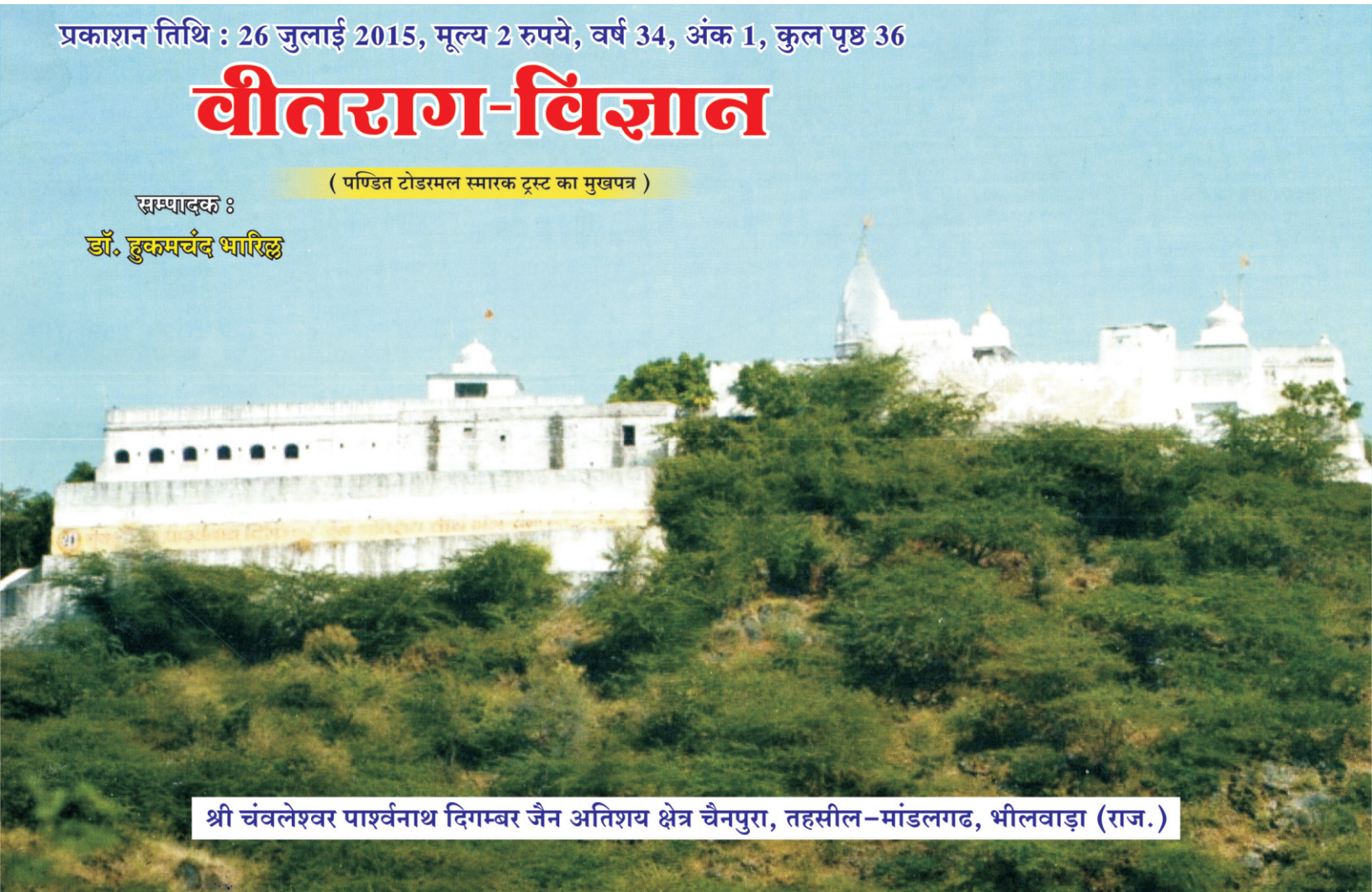

श्री चंवलेश्वर पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र चैनपुरा, तहसील-मांडलगढ, भीलवाड़ा (राज.)

# वीतराग-विज्ञान (385)

## हिन्दी, मराठी व कन्नड़ भाषा में प्रकाशित

## जैनसमाज का सर्वाधिक बिक्रीवाला आध्यात्मिक मासिक

**सम्पादक :**

डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

**सह-सम्पादक :**

डॉ. संजीवकुमार गोधा

**प्रकाशक एवं मुद्रक :**

ब्र. यशपाल जैन द्वारा पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के लिये जयपुर प्रिण्टर्स प्रा. लि., जयपुर से मुद्रित एवं प्रकाशित।

**सम्पर्क-सूत्र :**

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट

ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015

फोन :(0141)2705581, 2707458

फैक्स : 2704127

E-mail : ptstjaipur@yahoo.com

**शुल्क :**

| | | |
|---|---|---|
| आजीवन | : | 251 रुपये |
| वार्षिक | : | 25 रुपये |
| एक प्रति | : | 2 रुपये |

**मुद्रण संख्या :**

| | | |
|---|---|---|
| हिन्दी | : | 7200 |
| मराठी | : | 2000 |
| कन्नड़ | : | 1000 |
| **कुल** | **:** | **10200** |

## ज्ञायक का लक्ष्य

मैं पूर्णानन्द का स्वामी ज्ञायकप्रभु हूँ ऐसे ज्ञायक के लक्ष्य से जो जीव श्रवण करता है, उसे सुनते हुए भी लक्ष्य ज्ञायक का रहता है, उसके चिन्तवन में भी मैं परिपूर्ण ज्ञायकवस्तु हूँ - ऐसा जोर रहता है, उस जीव को सम्यक्त्व सन्मुखता रहती है। मंथन में भी लक्ष्य ज्ञायक का रहता है, यह चैतन्यभाव परिपूर्ण वस्तु है ऐसा उसके जोर में रहता है, उसे भले ही अभी सम्यक्दर्शन नहीं हुआ हो, जितना कारण देना चाहिए उतना नहीं दे पाया हो, तथापि उस जीव को सम्यक्त्व की सन्मुखता होती है। उस जीव को अंतर से ऐसी लगन लगती है कि मैं तो जगत का साक्षी हूँ, ज्ञायक हूँ। ऐसे दृढ संस्कार अंतर में डालता है कि जो पलट नहीं सकते। जिसप्रकार सम्यग्दर्शन होने पर अप्रतिहतभाव कहा है उसीप्रकार सम्यक्त्व सन्मुखता के ऐसे दृढ संस्कार पड़ते हैं कि अब उसे सम्यग्दर्शन होकर ही रहेगा। जैसे - समयसार गाथा 4 में कहा है कि मिथ्यात्व का एकछत्र शासन चल रहा है, वैसे ही ज्ञायक का एकछत्र लक्ष्य आना चाहिए। उपयोग एकमात्र ज्ञान में स्थिर न रह सके तो द्रव्य-गुण-पर्याय आदि के विचार में बदल दे, उपयोग को सूक्ष्म करते-करते ज्ञायक के बल से आगे बढे वह जीव क्रमश: सम्यग्दर्शन प्राप्त करता है। 238

**- द्रव्यदृष्टि जिनेश्वर, पृष्ठ 55**

**वीतराग-विज्ञान ही, तीन लोक में सार।**
**वीतराग-विज्ञान का , घर-घर होय प्रसार।।**

वर्ष : 34 (वीर नि. संवत् - 2541) 385 अंक : 1

## देखो भाई महाविकल संसारी...

देखो भाई महाविकल संसारी।
दुखित अनादि मोह के कारन, राग-द्वेष भ्रम भारी।।टेक।।
हिंसारंभ करत सुख समझै, मृषा बोलि चतुराई।
परधन हरत समर्थ कहावै, परिग्रह बढत बड़ाई।।1।।
वचन राख काया दृढ राखै, मिटै न मन चपलाई।
यातैं होत और की औरैं, शुभ करनी दुखदाई।।2।।
जोगासन करि कर्म निरोधै, आतम दृष्टि न जागे।
कथनी कथत महंत कहावै, ममता मूल न त्यागै।।3।।
आगम वेद सिद्धांत पाठ सुनि, हिये आठ मद आनै।
जाति लाभ कुल बल तप विद्या, प्रभुता रूप बखानै।।4।।
जड सौं राचि परम पद साधै, आतम शक्ति न सूझे।
बिना विवेक विचार दरब के, गुण परजाय न बूझै।।5।।
जस वाले जस सुनि संतोषै, तप वाले तन सोषैं।
गुन वाले परगुन को दोषैं, मतवाले मत पोषैं।।6।।
गुरु उपदेश सहज उदयागति, मोह विकलता छूटै।
कहत 'बनारसि' है करुनारसि, अलख अखय निधि लूटै।।7।।

**- कविवर पण्डित बनारसीदासजी**

# सम्पादकीय

## तत्त्वार्थमणिप्रदीप

( आचार्य उमास्वामी कृत तत्त्वार्थसूत्र की टीका )

**(गतांक से आगे....)**

## सातवाँ अध्याय

## पृष्ठभूमि

छठवें अध्याय में आस्रव तत्त्वार्थ का सामान्य स्वरूप बताया तथा आठों कर्मों के आस्रव के कारणों पर विस्तृत चर्चा की।

अब इस सातवें अध्याय में **शुभास्रव** का विस्तार से विवेचन करते हैं।

### व्रत का स्वरूप एवं प्रकार

अब सर्वप्रथम व्रत का स्वरूप और उसके प्रकारों की चर्चा करते हैं; जो इसप्रकार है –

**हिंसानृतस्तेयाब्रह्मपरिग्रहेभ्यो विरतिर्व्रतम् ।।१।।**

**देशसर्वतोऽणु महती ।।२।।**

***हिंसा, अनृत (झूठ), अस्तेय (चोरी), अब्रह्म (कुशील) और परिग्रह – इन पाँचों पापों से विरत होना व्रत है।***

***एकदेश व्रत अर्थात् अणुव्रत और सर्वदेश व्रत अर्थात् महाव्रत; इसप्रकार अणुव्रत और महाव्रत के भेद से व्रत दो प्रकार के होते हैं।***

***उक्त पाँचों पापों के एकदेश त्याग को अणुव्रत कहते हैं और पूरी तरह त्याग को महाव्रत कहते हैं।***

उक्त पाँच पापों का स्वरूप आगे आचार्यदेव स्वयं सूत्रों द्वारा प्रस्तुत करेंगे।

यहाँ एक **प्रश्न** संभव है कि व्रतों को तो संवर अधिकार में लेना चाहिए; यहाँ आस्रव अधिकार में क्यों लिया ?

इसीप्रकार की शंका सर्वार्थसिद्धि नामक वृत्ति में आचार्य पूज्यपाद ने भी उठाई है और उसका समाधान भी किया है; जो इसप्रकार है –





**''शंका –** यह व्रत आस्रव का कारण है, यह बात नहीं बनती; क्योंकि संवर के कारणों में इनका अन्तर्भाव होता है।

आगे गुप्ति, समिति इत्यादि संवर के कारण कहनेवाले हैं। वहाँ दस प्रकार के धर्मों में एक संयम नाम का धर्म बतलाया है। उसमें व्रतों का अन्तर्भाव होता है ?

**समाधान –** यह कोई दोष नहीं है; क्योंकि वहाँ **निवृत्तिरूप संवर का कथन करेंगे** और यहाँ प्रवृत्ति देखी जाती है; क्योंकि **हिंसा, असत्य और अदत्तादान आदि का त्याग करने पर अहिंसा, सत्यवचन और दी हुई वस्तु का ग्रहण आदि रूप क्रिया देखी जाती है।**[१]''

इसीप्रकार का भाव आचार्य अकलंकदेव ने राजवार्तिक में भी प्रस्तुत किया है; उसका महत्त्वपूर्ण अंश इसप्रकार है –

**''व्रत संवररूप नहीं हैं; क्योंकि इनमें परिस्पन्द प्रवृत्ति है। असत्य चोरी आदि से विरक्त होकर सत्य अचौर्य आदि प्रवृत्ति देखी जाती है।**

हाँ, गुप्ति आदि संवर के लिए ये अहिंसादिव्रत सहायक होते हैं। व्रतों का संस्कार रखनेवाला साधु सुखपूर्वक संवर करता है।

**अत: संवर की भूमिकारूप इन व्रतों का पुण्यास्रव का हेतु होने से यहाँ ही निर्देश करना उचित है।**[२]''

रात्रिभोजन के संदर्भ में आचार्य पूज्यपाद के विचार दृष्टव्य हैं –

**''शंका –** रात्रिभोजनविरमण नाम का छठा अणुव्रत है, उसकी यहाँ परिगणना करनी थी ?

**समाधान –** नहीं, क्योंकि उसका भावनाओं में अन्तर्भाव हो जाता है। आगे अहिंसा व्रत की भावनाएँ कहेंगे। उनमें एक **आलोकितपान भोजन** नाम की भावना है, उसमें रात्रिभोजनविरमण नामक व्रत का अन्तर्भाव हो जाता है।[३]''

आचार्य अकलंकदेव राजवार्तिक में रात्रिभोजनत्याग के पक्ष में अनेक महत्त्वपूर्ण तर्क प्रस्तुत करते हैं[४]; जो मूलत: पठनीय हैं।।१-२।।

---

१. आचार्य पूज्यपाद : सर्वार्थसिद्धि, पृष्ठ २६५
२. आचार्य अकलंकदेव : राजवार्तिक, पृष्ठ ७२५-७२६
३. आचार्य पूज्यपाद : सर्वार्थसिद्धि, पृष्ठ २६५
४. आचार्य अकलंकदेव : राजवार्तिक, पृष्ठ ७२६

## व्रतों की भावनायें

उक्त पाँच व्रतों के पालन में स्थिरता रहे – इस भावना से व्रतीजन निम्नांकित भावनायें भाते हैं –

**तत्स्थैर्यार्थं भावनाः पञ्च पञ्च ।।३।।**

**वाङ्मनोगुप्तीर्यादाननिक्षेपणसमित्यालोकितपान-भोजनानि पञ्च ।।४।।**

**क्रोधलोभभीरुत्वहास्यप्रत्याख्यानान्यनुवीचिभाषणं च पञ्च ।।५।।**

**शून्यागारविमोचितावासपरोपरोधाकरणभैक्ष्यशुद्धि-सधर्माविसंवादाः पञ्च ।।६।।**

**स्त्रीरागकथाश्रवणतन्मनोहरांगनिरीक्षणपूर्वरतानुस्मरणवृष्येष्टरस-स्वशरीरसंस्कारत्यागाः पञ्च ।।७।।**

**मनोज्ञामनोज्ञेन्द्रियविषयरागद्वेषवर्जनानि पञ्च ।।८।।**

***उक्त व्रतों की स्थिरता के लिए प्रत्येक व्रत की पाँच-पाँच भावनायें हैं।***

***वचनगुप्ति, मनोगुप्ति, ईर्यासमिति, आदाननिक्षेपणसमिति और आलोकितपानभोजन – ये अहिंसा व्रत की पाँच भावनायें हैं।***

***क्रोधप्रत्याख्यान, लोभप्रत्याख्यान, भीरुत्वप्रत्याख्यान, हास्य-प्रत्याख्यान और अनुवीचिभाषण – ये सत्य व्रत की पाँच भावनाएँ हैं।***

***शून्यागारावास, विमोचितावास, परोपरोधाकरण, भैक्ष्यशुद्धि और सधर्माविसंवाद – ये अचौर्य व्रत की पाँच भावनायें हैं।***

***स्त्रियों में राग को पैदा करनेवाली कथा के सुनने का त्याग, स्त्रियों के मनोहर अंगों को देखने का त्याग, पूर्व भोगों के स्मरण का त्याग, गरिष्ठ और इष्ट रस का त्याग तथा अपने शरीर के संस्कार का त्याग – ये ब्रह्मचर्य व्रत की पाँच भावनायें हैं।***

***मनोज्ञ और अमनोज्ञ इन्द्रियों के विषयों में क्रम से राग और द्वेष का त्याग करना – ये अपरिग्रहव्रत की पाँच भावनायें हैं।***

वचनगुप्ति, मनोगुप्ति, ईर्यासमिति और आदाननिक्षेपणसमिति का स्वरूप संवर-अधिकार अर्थात् नौवें अधिकार में समझाया जायेगा और अच्छी तरह देखभाल





कर भोजन करना और पानी पीना आलोकित भोजनपान है। ये अहिंसाव्रत की पाँच भावनायें हैं।

**इस आस्रव अधिकार में ये भावनारूप हैं और संवर-निर्जरा अधिकार में परिणमनरूप होगी।**

प्रत्याख्यान का अर्थ त्याग होता है। इसप्रकार क्रोध के त्याग, लोभ के त्याग, भय के त्याग और हास्य के त्याग की भावना भाने की बात है। अनुवीचिभाषण निर्दोषभाषण को कहते हैं।

ये सत्यव्रत की पाँच भावनायें हैं।

**यहाँ ये सब भावनारूप हैं और संवर-निर्जरा अधिकार में परिणमन रूप होगी।**

पर्वत की गुफा और वृक्ष का कोटर आदि शून्यागार हैं, इनमें रहना **शून्यागारावास** है। दूसरों द्वारा छोड़े हुए मकान आदि में रहना **विमोचितावास** है। दूसरों को ठहरने से नहीं रोकना **परोपरोधाकरण** है। आचार शास्त्र में बतलायी हुई विधि के अनुसार भिक्षा लेना **भैक्षशुद्धि** है। 'यह मेरा है यह तेरा है' इसप्रकार साधर्मियों से विसंवाद नहीं करना **सधर्माविसंवाद** है। ये अचौर्यव्रत की पाँच भावनायें हैं।

स्त्रियों में राग को पैदा करनेवाली कथा के सुनने का त्याग, स्त्रियों के मनोहर अंगों को देखने का त्याग, पूर्व भोगों के स्मरण का त्याग, गरिष्ठ और इष्ट रस का त्याग तथा अपने शरीर के संस्कार का त्याग – ये ब्रह्मचर्य व्रत की पाँच भावनायें हैं।

स्पर्शन आदि पाँच इन्द्रियों के इष्ट और अनिष्ट स्पर्श आदिक पाँच विषयों के प्राप्त होने पर राग और द्वेष का त्याग करना – ये अपरिग्रहव्रत की पाँच भावनायें जाननी चाहिए।।३-८।।

## कुछ अन्य महत्त्वपूर्ण भावनायें

पाँच व्रतों की उक्त २५ भावनाओं के अतिरिक्त अन्य भी कुछ ऐसी भावनायें हैं; जो अणुव्रतों व महाव्रतों की साधक हैं, उन्हें प्रोत्साहित करने वाली हैं; वे इसप्रकार हैं –

**हिंसादिष्विहामुत्रापायावद्यदर्शनम् ।।९।।**

**दुःखमेव वा ।।१०।।**

**मैत्रीप्रमोदकारुण्यमाध्यस्थ्यानि च सत्त्वगुणाधिक-क्लिश्यमाना-विनयेषु ।।११।।**

**जगत्कायस्वभावौ वा संवेगवैराग्यार्थम् ।।१२।।**

***हिंसा आदि पाँच पाप इस लोक में और परलोक में विनाशकारी और निन्दनीय हैं – ऐसी भावना भाना चाहिए।***

***अथवा ये हिंसादि पाप दु:खरूप ही हैं – ऐसी भावना भाना चाहिए।***

***समस्त प्राणियों से मित्रता की भावना रखना चाहिए, गुणवानों के प्रति प्रमोदभाव रखना चाहिए, दु:खी जीवों के प्रति करुणाभाव रखना चाहिए और अविनयी उद्दण्ड लोगों के प्रति माध्यस्थभाव रखना चाहिए।***

***संवेग और वैराग्य के लिए जगत का और शरीर के स्वभाव का विचार करते रहना चाहिए।***

किसी को मारने, दु:खी करने और अनेक प्रकार का कष्ट पहुँचाने का भाव तथा इसप्रकार की क्रियाओं में प्रवृत्ति का परिणाम अगले भवों में दुर्गति का कारण तो होता ही है; इस भव में भी मारणान्तिक दु:ख देनेवाला है; क्योंकि जिसको आप मारना चाहते हैं या दु:खी करना चाहते हैं, वह भी तो अपने बचाव में ही सही, आपसे उसीप्रकार का व्यवहार कर सकता है, करता है; सरकार भी हिंसक के साथ कठोर व्यवहार करती है, आजीवन कारावास या मृत्युदण्ड तक दे सकती है, देती है। अत: हमें हिंसा और हिंसा के भावों से बचने का प्रयास निरन्तर करना चाहिए।

हमें निरन्तर ऐसी भावना भाना चाहिए कि मेरे हृदय में इसप्रकार के दूसरों को सताने के भाव कभी भी न आवें।

इसीप्रकार झूठ बोलने, चोरी करने, कुशील सेवन करने व परिग्रह जोड़ने या अधिक परिग्रह जोड़ने के विरुद्ध भी सोचना चाहिए और भावना भाना चाहिए कि इसप्रकार के पाप मेरे जीवन में कभी न हों, पापभाव भी मन में न आवें। इसमें ही हम सबका भला है।

ये हिंसादि पाप और पापभाव दु:खस्वरूप ही हैं, दु:ख ही हैं, दु:ख के ही कारण हैं। स्वयं को दु:ख देनेवाले हैं और पर को भी दु:ख देनेवाले हैं। इनसे न आजतक किसी का भला हुआ है और न कभी होने वाला ही है।





हमें निरन्तर ऐसी भावना भाना चाहिए कि जगत के समस्त जीवों से मेरा सदा ही मैत्री भाव रहे, किसी से भी बैर-विरोध न हो।

गुणीजनों के प्रति मेरे हृदय में सदा ही प्रमोदभाव जागृत रहे, उन्हें देखकर उनके प्रति सम्मानभाव जागृत होना चाहिए।

जगत में जो जीव दु:खी दिखाई दें, उनके प्रति निष्कारण करुणाभाव जागृत होना चाहिए। उनका दु:ख दूर करने का न केवल भाव होना चाहिए, अपितु यथासंभव प्रयास भी करना चाहिए।

जो लोग हम से बैरभाव रखते हैं, अविनयी हैं, उद्दण्ड हैं; उनसे भी हमें माध्यस्थ भाव रखना चाहिए; क्योंकि किसी से भी लड़ने-झगड़ने से कुछ भी होनेवाला नहीं है।

यदि हमें अपनी शान्ति भंग नहीं करनी है, निराकुलभाव से रहना है, अपने स्वाध्याय आदि कार्य में निर्विघ्न रूप से लगे रहना है तो विपरीत वृत्तिवालों से माध्यस्थ भाव रखना ही श्रेष्ठ है।

सामायिक पाठ में भी आता है –

**सत्त्वेषु मैत्रीं गुणिषु प्रमोदं क्लिष्टेषु जीवेषु कृपापरत्वम्।**
**माध्यस्थभावं विपरीतवृत्तौ सदा ममात्मा विदधातु देव ।।१।।**

हे देव! मेरे आत्मा को ऐसा बना दो कि वह सभी प्राणियों से मैत्री का भाव रखे, गुणीजनों से प्रमोदभाव रखे, दुखीजनों के प्रति करुणाभाव रखे और विपरीत वृत्ति वालों से माध्यस्थभाव रखें।

पण्डित जुगलकिशोरजी मुख्त्यार भी उक्त छन्द के अनुकरण पर 'मेरी भावना' नामक अपनी कृति में लिखते हैं –

**मैत्री भाव जगत में मेरा, सब जीवों से नित्य रहे।**
**दीन-दु:खी जीवों पर मेरे, उर से करुणा स्रोत बहे।।**
**दुर्जन क्रूर-कुमार्गरतों पर, क्षोभ नहीं मुझको आवे।**
**साम्य-भाव रक्खूँ मैं उन पर, ऐसी परिणति हो जावे।।५।।**
**गुणीजनों को देख हृदय में मेरे प्रेम उमड़ आवे।**
**बने जहाँ तक उनकी सेवा करके यह मन सुख पावे।।**

**होऊँ नहीं कृतघ्न कभी मैं द्रोह न मेरे उर आवे।**
**गुण-ग्रहण का भाव रहे नित दृष्टि न दोषों पर जावे।।६।।**

हम इस दु:खमयी संसार से निरन्तर भयभीत रहें और हमारा वैराग्य निरन्तर दृढ़ता को प्राप्त होता रहे – इसके लिए हमें इस जगत के स्वरूप का एवं इस क्षणभंगुर, मल-मूत्र की खान देह के स्वभाव का भी विचार करते रहना चाहिए।

यह संसार दु:खों का घर है। इसमें कहीं भी कोई सुखी नजर नहीं आता है, शरीर की स्थिति भी ऐसी ही है कि इसमें एक क्षण भी रहने लायक नहीं है। इसप्रकार हमारे हृदय में संवेग और वैराग्य की भावना निरन्तर बढ़ती रहना चाहिये।।९-१२।।

## हिंसा आदि पाँच पापों का स्वरूप

अब हिंसादि पाँच पापों का स्वरूप स्पष्ट करते हैं –

**प्रमत्तयोगात्प्राणव्यपरोपणं हिंसा।।१३।।**
**असदभिधानमनृतम्।।१४।।**
**अदत्तादानं स्तेयम्।।१५।।**
**मैथुनमब्रह्म।।१६।।**
**मूर्च्छा परिग्रहः।।१७।।**

ध्यान रहे, **प्रमत्तयोगात्** पद आदि दीपक है। इसे पाँचों पापों संबंधी सूत्रों के आरंभ में जोड़ना है।

तदनुसार पाँचों सूत्रों का अर्थ इसप्रकार होगा –

***प्रमाद के योग से प्राणों का व्यपरोपण (वियोग) करना, हिंसा है।***
***प्रमाद के योग से असत्य बोलना, अनृत (झूठ) है।***
***प्रमाद के योग से बिना दी हुई वस्तु का ग्रहण करना, स्तेय (चोरी) है।***
***प्रमाद के योग से मैथुन सेवन करना, अब्रह्म (कुशील) है।***
***प्रमाद के योग से मूर्च्छा (ममत्व परिणाम) होना, परिग्रह है।***

**प्रमाद कषाय सहित अवस्था को कहते हैं।** तात्पर्य यह है कि कषायों के वश स्व-पर के प्राणों का वियोग करना, झूठ बोलना, चोरी करना, कुशील सेवन करना और परिग्रह जोड़ना-रखना क्रमश: हिंसा, असत्य, चोरी, कुशील और





परिग्रह नामक पाप हैं।

**कषायों के वश होकर जीव पाप करता है; पर मिथ्यात्व के वश होकर घोर पाप करता है। इसलिए हिंसादि पाप हैं और मिथ्यात्व महापाप है।**

दूसरी अपेक्षा यह भी है कि प्रमाद पाँच चीजों को मिलाकर बनता है। चार विकथा, चार कषाय, पाँच इन्द्रियों की आधीनता, निद्रा और स्नेह – इनका परस्पर गुणा करने पर ४×४×५×१×१=८० – इसप्रकार प्रमाद के अस्सी भंग बन जाते हैं।

स्त्रीकथा, भक्तकथा, राष्ट्रकथा और अवनिपालकथा - ये चार विकथायें; क्रोध, मान, माया और लोभ - ये चार कषायें; एवं स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु और कर्ण - इन पाँच इन्द्रियों की अधीनता तथा निद्रा और स्नेह - ये १५ प्रकार के प्रमाद हैं। इनका परस्पर में गुणा करने से प्रमाद के ८० भंग बन जाते हैं।

जैसे -

(१) स्त्रीकथालापी, क्रोधी, स्पर्शनेन्द्रियवशंगत, निद्रालु और स्नेहवान - यह पहला भंग हुआ।

(२) स्त्रीकथालापी, क्रोधी, रसनेन्द्रियवशंगत, निद्रालु और स्नेहवान - यह दूसरा भंग हुआ।

इसीप्रकार इन्द्रियों के वशंगत संबंधी ५ भंग बन जायेंगे।

इसके बाद क्रोध की जगह मान रखकर शेष पूरा वैसा रखो तो पाँच भंग और बन जायेंगे। इसके बाद स्त्रीकथा के स्थान भक्तकथा - इसप्रकार बदलते जायें तो ८० भंग बन जाते हैं।

इसप्रकार जो ८० भंगवाला प्रमाद है; उसके वशीभूत होकर हिंसादि पाप होते हैं।

यह तो आप जानते ही हैं कि हिंसादि पाँच पाप पहले गुणस्थान से छठवें गुणस्थान तक होते हैं; क्योंकि वहीं तक प्रमाद का योग रहता है।

बंध के कारणभूत आस्रवभाव पाँच प्रकार के होते हैं - मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग।

चौथे गुणस्थान में मिथ्यात्व चला जाता है, पाँचवें गुणस्थान में अविरति चली जाती है, सातवें गुणस्थान में प्रमाद चला जाता है; इसप्रकार प्रमाद में मिथ्यात्व, अविरति तथा संज्वलन कषाय और नौ नोकषाय के मन्दोदय को

छोड़कर शेष सभी कषायों के मिश्रितरूप भाव का नाम प्रमाद है। ऐसे प्रमाद का योग छठवें गुणस्थान तक रहता है।

यही कारण है कि प्रमाद के योग से होनेवाले पाँचों पाप छठवें गुणस्थान तक ही होते हैं।।१३-१७।।

## व्रत की परिभाषा और भेद-प्रभेद

पाँच पापों का स्वरूप बताने के बाद अब उनके त्यागरूप व्रतों की बात करते हैं –

**निःशल्यो व्रती ।।१८।।**

**अगार्यनगारश्च ।।१९।।**

**अणुव्रतोऽगारी ।।२०।।**

**दिग्देशानर्थदण्डविरतिसामायिकप्रोषधोपवासोपभोगपरिभोग-परिमाणातिथिसंविभागव्रतसंपन्नश्च ।।२१।।**

***जो शल्य रहित हो, उसे व्रती कहते हैं।***

***व्रती दो प्रकार के होते हैं – १. अगारी अर्थात् गृहस्थ, २. अनगारी अर्थात् गृहत्यागी साधु।***

***अणुव्रती को अगारी कहते हैं।***

***दिग्विरति, देशविरति, अनर्थदण्डविरति, सामायिकव्रत, प्रोषधोपवासव्रत, भोगपरिभोगपरिमाणव्रत और अतिथिसंविभागव्रत – इन सात व्रतों से सहित गृहस्थ अणुव्रती होता है।***

जो शल्य (कील-काँटा) की भाँति कष्ट दें, उसे **शल्य** कहते हैं।

शल्य तीन प्रकार की होती है – माया, मिथ्यात्व और निदान।

१. छलकपट को **माया** कहते हैं। २. जीवादि तत्त्वों संबंधी विपरीत मान्यता और कुदेवादि का श्रद्धान **मिथ्यात्व** है। ३. विषयभोग की चाह **निदान** है। जो इन तीन शल्यों से रहित हो, वह **व्रती** है।

व्रती दो प्रकार के होते हैं – गृहस्थ और साधु। अणुव्रती गृहस्थ होता है और महाव्रती साधु होते हैं।

अणुव्रत और महाव्रत के भेद से व्रत दो प्रकार के होते हैं।

हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह – इन पाँच पापों का एकदेश त्याग





**पाँच अणुव्रत** हैं और सर्वदेशत्याग **पाँच महाव्रत** हैं।

दिग्विरति व्रत को संक्षेप में दिग्व्रत भी कहते हैं। इसीप्रकार देशविरतिव्रत को देशव्रत और अनर्थदण्डविरतिव्रत को अनर्थदण्डव्रत भी कहते हैं।

दिग्व्रत, देशव्रत और अनर्थदण्डव्रत – ये **तीन गुणव्रत** और सामायिक, प्रोषधोपवास, भोगोपभोगपरिमाणव्रत तथा अतिथिसंविभाग व्रत – ये **चार शिक्षाव्रत** होते हैं। तीन गुणव्रतों और चार शिक्षाव्रतों को **सात शीलव्रत** कहते हैं।

**दिग्व्रत –** कषायांश कम हो जाने से गृहस्थ, दशों दिशाओं में प्रसिद्ध स्थानों के आधार पर अपने आवागमन की सीमा निश्चित कर लेता है और जीवन पर्यन्त उसका उल्लंघन नहीं करता, इसे **दिग्व्रत** कहते हैं।

**देशव्रत –** दिग्व्रत की बाँधी हुई विशाल सीमा को घड़ी, घंटा, दिन, सप्ताह, माह आदि काल की मर्यादापूर्वक और भी सीमित (कम) कर लेना **देशव्रत** है।

**अनर्थदण्डव्रत –** बिना प्रयोजन हिंसादि पापों में प्रवृत्ति करना या उस रूप भाव करना **अनर्थदण्ड** है और उसके त्याग को **अनर्थदण्डव्रत** कहते हैं।

व्रती श्रावक बिना प्रयोजन जमीन खोदना, पानी ढोलना, अग्नि जलाना, वायु संचार करना, वनस्पति छेदन करना आदि कार्य नहीं करता अर्थात् त्रसहिंसा का तो वह त्यागी है ही, पर अप्रयोजनीय स्थावरहिंसा का भी त्याग करता है तथा राग-द्वेषादिक प्रवृत्तियों में भी उनकी वृत्ति नहीं रमती, वह इनसे विरक्त रहता है।

इसी व्रत को **अनर्थदण्डव्रत** कहते हैं।

**सामायिकव्रत –** सम्पूर्ण द्रव्यों में राग-द्वेष के त्यागपूर्वक समता भाव का अवलम्बन करके आत्मभाव की प्राप्ति करना ही सामायिक है। व्रती श्रावकों द्वारा प्रातः, दोपहर, सायं – कम से कम अन्तर्मुहूर्त एकान्त स्थान में सामायिक करना **सामायिक व्रत** है।

**प्रोषधोपवासव्रत –** कषाय, विषय और आहार का त्याग कर आत्म स्वभाव के समीप ठहरना उपवास है। प्रत्येक अष्टमी व चतुर्दशी को सर्वारंभ छोड़कर उपवास करना ही **प्रोषधोपवास** है।

यह तीन प्रकार से किया जाता है – उत्तम, मध्यम और जघन्य।

**उत्तम –** पर्व के एक दिन पूर्व व एक दिन बाद एकासनपूर्वक व पर्व के दिन

पूर्ण उपवास करना **उत्तम प्रोषधोपवास** है।

**मध्यम –** केवल पर्व के दिन उपवास करना **मध्यम प्रोषधोपवास** है।

**जघन्य –** पर्व के दिन केवल एकासन करना **जघन्य प्रोषधोपवास** है।

**भोगोपभोगपरिमाणव्रत –** प्रयोजनभूत सीमित परिग्रह के भीतर भी कषाय कम करके भोग और उपभोग का परिमाण घटाना **भोगोपभोग परिमाणव्रत** है।

पंचेन्द्रिय के विषयों में जो एक बार भोगने में आ सकें, उन्हें **भोग** और बार-बार भोगने में आवें, उन्हें **उपभोग** कहते हैं।

**अतिथिसंविभागव्रत –** मुनि, व्रती श्रावक और अव्रती श्रावक – इन तीन प्रकार के पात्रों को अपने भोजन में से विभाग करके विधिपूर्वक दान देना अतिथिसंविभागव्रत है।।१८-२१।।

## सल्लेखना

व्रतों की चर्चा के उपरान्त अब सल्लेखना (समाधिमरण) की बात करते हैं –

**मारणान्तिकीं सल्लेखनां जोषिता।।२२।।**

***मरणकाल उपस्थित होने पर सल्लेखना (समाधिमरण) व्रत का प्रीति पूर्वक सेवन करना चाहिए।***

**सम्यक् काय-कषाय लेखना सल्लेखना**[1] - काय और कषायों को भलीप्रकार से कृष करना ही सल्लेखना है। मरणान्त समय में होनेवाली इस सल्लेखना के सम्बन्ध में रत्नकरण्डश्रावकाचार के सल्लेखना नामक (छठवें) अधिकार में आचार्य समन्तभद्र लिखते हैं-

**उपसर्गे दुर्भिक्षे जरसि रुजायां च निःप्रतिकारे।**
**धर्माय तनु विमोचनमाहुः सल्लेखनामार्या।।**[2]

जिनका प्रतिकार संभव न हो; ऐसे उपसर्ग में, दुर्भिक्ष में, बुढ़ापे में और रोग की स्थिति में धर्म की रक्षा के लिये शरीर का त्याग कर देने को आर्यगण सल्लेखना कहते हैं, समाधिमरण कहते हैं।

तात्पर्य यह है कि ऐसा उपसर्ग आ जाय कि मृत्यु सन्निकट हो, उससे बचने का कोई उचित मार्ग न रह गया हो; ऐसा दुर्भिक्ष (अकाल) आ पड़े कि जब शुद्ध

१. सर्वार्थसिद्धि; पृष्ठ २८०  २. रत्नकरण्डश्रावकाचार, श्लोक १२२





सात्विक विधि से जीवन निर्वाह संभव न हो; ऐसा बुढ़ापा आ जाय कि अहिंसक विधि से जीवित रहना संभव न रहा हो; ऐसी बीमारी आ जाय कि अहिंसक विधि से जिसका उपचार (इलाज) संभव न रहे; ऐसी स्थिति में अपने धर्म की रक्षा के लिये शास्त्रविहित विधिपूर्वक शरीर का त्याग कर देने को सज्जन पुरुष, ज्ञानीजन, समाधिमरण या सल्लेखना कहते हैं।

यदि उपसर्ग, दुर्भिक्ष, बुढ़ापा और भयंकर बीमारी का प्रतिकार संभव हो, इलाज संभव हो तो सबसे पहले प्रतिकार करना चाहिये, इलाज करना चाहिये, उपाय करना चाहिये। यदि कोई भी अहिंसक निरापद उपाय शेष न रहा हो तो जिनागम में निरूपित विधि से समाधि ले लेना चाहिये।

यहाँ एक **प्रश्न** संभव है कि यह तो एक प्रकार से आत्महत्या ही हुई। आत्महत्या परहत्या से भी बड़ा पाप है।

**उत्तर –** सल्लेखना या समाधिमरण आत्महत्या नहीं है; क्योंकि आत्महत्या तो अत्यन्त तीव्रकषाय के आवेग में की जाती है; पर इसमें तो बहुत सोच-समझकर विवेकपूर्वक कषायों को मन्द करते हुये शरीर को कृष किया जाता है। वह भी तब, जबकि जीवित रहने का कोई उपाय न रहे।

जहाँ तक हमारे व्रतों की मर्यादा के भीतर उपचार संभव है, इलाज संभव है; वहाँ तक सल्लेखना लेने का अधिकार ही नहीं है।

मानसिक बीमारियाँ **आधि** कहलाती है, शारीरिक बीमारियाँ **व्याधि** कहलाती है और बाह्य उपद्रव **उपाधियाँ** हैं। इन तीनों से परे अपने त्रिकालीध्रुव परमात्मा में, निजात्मा में समा जाना **समाधि** है।

**यह समाधि ही सल्लेखना है।**

मृत्यु की अनिवार्य उपस्थिति में अत्यन्त समताभाव पूर्वक योग्य गुरु के मार्गदर्शन में प्राणों का विधिपूर्वक उत्सर्ग कर देना ही **समाधिमरण, सल्लेखना** है।

देह का परिवर्तन तो होना ही है। यह एक सार्वभौमिक सत्य है। इस सत्य को स्वीकार कर देह हमें छोड़े – इसके पहले हम उसे छोड़ने को तैयार हो जावें। इसी में समझदारी है। इस समझदारी का प्रायोगिक रूप ही सल्लेखना है, समाधिमरण है।

मरणान्त समय में होनेवाला यह सल्लेखनाव्रत समाधिमरण श्रावकों और

साधुओं को अवश्य करना चाहिये ।।२२।।

## सम्यक्त्व के अतिचार

सल्लेखना अर्थात् समाधिमरण की चर्चा के उपरान्त अब सम्यक्त्व के अतिचारों की चर्चा करते हैं; जो इसप्रकार है -

**शंकाकांक्षाविचिकित्सान्यदृष्टिप्रशंसासंस्तवाः सम्यग्दृष्टेरतीचाराः।।२३।।**

***शंका, कांक्षा, विचिकित्सा, अन्यदृष्टिप्रशंसा और अन्यदृष्टिसंस्तवन - ये पाँच सम्यग्दृष्टि या सम्यग्दर्शन के अतिचार हैं।***

किसी भी व्रत के एकदेश भंग होने को या व्रत में अल्पदोष लगने को **अतिचार** कहते हैं और व्रत के पूर्णतः भंग होने को या व्रत में महान दोष लगने को **अनाचार** कहते हैं।

**दोषों में एकबार प्रवृत्ति अतिचार है और बार-बार प्रवृत्ति अनाचार है। यहाँ पर अतिचारों की चर्चा है।**

**१. शंका** - अरहंत भगवान द्वारा कहे गये तत्त्वज्ञान में शक होना अथवा सप्तभयों का होना **शंका** नामक पहला अतिचार है। कहा भी है-

**सम्माद्दिट्ठी जीवा णिस्संका होंति णिब्भया तेण।**
**सत्तभयविप्पमुक्का जम्हा तम्हा दु णिस्संका।।**[१]

सम्यग्दृष्टि जीव निःशंक होते हैं, इसीकारण निर्भय भी होते हैं। चूँकि वे सप्तभयों से रहित होते हैं; इसलिए निःशंक होते हैं।

**२. कांक्षा** - सुखबुद्धिपूर्वक पंचेन्द्रिय भोगों की चाह का होना, **कांक्षा** नामक दूसरा अतिचार है।

**३. विचिकित्सा** - रत्नत्रयमंडित मुनिराजों के मलिन शरीर को देखकर घृणा करना, **विचिकित्सा** नामक तीसरा अतिचार है।

**४. अन्यदृष्टिप्रशंसा** - मिथ्यादृष्टियों के ज्ञान, तप आदि देखकर उनके प्रति मन में महिमावंत होना **अन्यदृष्टिप्रशंसा** नामक चौथा अतिचार है।

**५. अन्यदृष्टिसंस्तवन** - वाणी से उनकी प्रशंसा करना **अन्यदृष्टिसंस्तवन** नामक पाँचवाँ अतिचार है।।२३।। **(क्रमशः)**

१. समयसार गाथा २२८



**छहढाला प्रवचन**

## सम्यग्ज्ञान की महिमा

**सकल द्रव्य के गुन अनन्त पर्याय अनन्ता।**
**जानै एकै काल प्रकट केवलि भगवन्ता।।**
**ज्ञान समान न आन जगत में सुख को कारन।**
**इह परमामृत जन्म-जरा-मृतु रोग निवारन।।४।।**
**कोटि जन्म तप तपैं ज्ञान बिन कर्म झरैं जे।**
**ज्ञानी के छिन मांहि त्रिगुप्ति तैं सहज टरैं ते।।**
**मुनिव्रत धार अनन्त बार ग्रीवक उपजायो।**
**पै निज आतम ज्ञान बिना सुख लेश न पायौ।।५।।**

(सुप्रसिद्ध आध्यात्मिक विद्वान पण्डित दौलतरामजीकृत छहढाला की चौथी ढाल पर गुरुदेवश्री के प्रवचन पाठकों के लाभार्थ यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं।)

**(गतांक से आगे....)**

जहाँ राग-विकल्प का कर्तृत्व है, वहाँ संसार है। देह की क्रिया अथवा विकल्प का कर्ता मैं नहीं, विकल्प से पार आनन्द स्वरूप सम्यग्ज्ञान ज्योति मैं हूँ, ऐसी वस्तु का अनुभव अर्थात् श्रद्धा-ज्ञान बिना कुछ भी हाथ आनेवाला नहीं है। आत्मज्ञान बिना यह जीव व्रतादि करके स्वर्ग में गया, फिर भी उसका जन्म-मरणरूप परिभ्रमण तो खड़ा ही रहा, उसका अन्त तो आया ही नहीं और सुख का अंश भी मिला नहीं। सम्यग्दृष्टि ज्ञानी धर्मात्मा अव्रती गृहस्थ हो, उसके कुटुम्ब-परिवार हो, त्यागी न हो; तथापि अन्तर में राग से पार चैतन्य तत्त्व मैं हूँ - ऐसे ज्ञान और अनुभव के बल से वह अल्पकाल में चारित्रदशा प्रकट करके, मुनि होकर, राग को सर्वथा तोड़कर मुक्ति प्राप्त करेगा। देखो तो सही, यह सम्यग्ज्ञान की महिमा! ज्ञान तो महान अमृत है, उस जैसा सुख जगत में किसी विषय में नहीं है। शुभराग में भी नहीं है। ऐसा ज्ञान ही जन्म-मरण का रोग नाश करने की परमौषधि है।

देवलोक में १६ स्वर्ग से ऊपर नवग्रैवेयक के देवस्थान हैं, वहाँ मिथ्यादृष्टि भी साधु होकर अनन्त बार गया, यद्यपि नवग्रैवेयक में सभी जीव मिथ्यादृष्टि थोड़े ही

हैं। महाव्रत धारण किए बिना कोई जीव वहाँ नहीं जा सकता। ऐसे देवलोक में अज्ञानी जीव द्रव्य साधु होकर महाव्रत पालन करके गया, किन्तु अन्दर राग से और पुण्य से भिन्न अपना आत्मा कैसा है, यह नहीं जाना। ग्यारह अंग और नवपूर्व तक का शास्त्र ज्ञान किया, फिर भी उससे लेश भी सुख नहीं पाया। देवलोक में असंख्य वर्ष रहा, परन्तु सुख किंचित् भी नहीं पाया। हाँ, कोई जीव वहाँ आत्मज्ञान प्रकट करे और सुख पावे – वह दूसरी बात है। परन्तु वह सुख तो आत्मज्ञान से पाया है, शुभ राग के कारण नहीं। आत्मा स्वयं सुखी है, उसमें परिणाम न जोड़े तो शास्त्र का जानपना अथवा व्रतादि शुभराग क्या करेंगे? अर्थात् इनसे क्या लाभ होगा ? भाई, अपने सुख-समुद्र आत्मा में उपयोग को जोड़ने पर तुझे अपूर्व शान्ति वेदन में आयेगी – ऐसे ज्ञान को आत्मज्ञान कहते हैं और वही सुख का कारण है।

महाव्रत पालन करके ग्रैवेयक में जाने पर भी जीव को लेश भी सुख प्राप्त नहीं हुआ। यह अकेले अभव्य की बात नहीं है, अभव्य की तरह भव्य जीव भी अज्ञानपने द्रव्य साधु होकर महाव्रत पालकर अनन्त बार ग्रैवेयक में गया है, किन्तु आत्मज्ञान के बिना लेशमात्र भी सुख नहीं मिला। श्रीमद् राजचन्द्रजी ने भी कहा है –

**यम नियम संयम आप कियो,**
**पुनि त्याग विराग अथाग लह्यो।**
**वनवास लियो मुख मौन रह्यो,**
**दृढ आसन पद्म लगाय दियो।**
**सब शास्त्रनि के नय धारि हिये,**
**मत मंडन खंडन भेद लिये।**
**यह साधन बार अनन्त किए,**
**तदपि कछु हाथ हजू न पर्‌यो।**
**अब क्यों न विचारत है मन से,**
**कुछ और रहा उन साधन से।।**

हे भाई, शुभराग की जो बात अनन्त बार करने पर भी तेरे हाथ में कुछ भी सुख नहीं आया, तेरे भव का अन्त नहीं आया, तो तू विचार कर कि इसके अतिरिक्त अन्य कुछ साधन शेष रह गया है और वह साधन है, आत्मज्ञान, जिसे यहाँ बतलाते हैं।

आगम में भगवान ने भी ज्ञान को ही मोक्ष का कारण कहा है। क्योंकि जो





परमार्थ ज्ञान से रहित अज्ञानी के व्रत-तप को बालव्रत और बालतप कहा है अर्थात् वह मोक्ष का कारण नहीं – ऐसा कहा है। अज्ञानी के महाव्रत को तो 'बालव्रत' कहा है। ऐसे बालव्रत अर्थात् अज्ञानव्रत को मोक्ष का कारण कैसे कहा जाय ? नहीं कह सकते।

**प्रश्न –** अज्ञानी के व्रत मोक्ष के कारण नहीं होते – यह बात तो ठीक है और जंचती भी है, परन्तु ज्ञानी के व्रत तो मोक्ष के कारण होते हैं न ?

**उत्तर –** नहीं भाई, ज्ञानी को मोक्ष का कारण तो उसका ज्ञान परिणमन है, व्रतादि का शुभराग मोक्ष का कारण नहीं है। राग तो बन्ध का ही कारण है, राग के समय उस राग से भिन्न परिणमन करता हुआ जो शुद्ध ज्ञान (अर्थात् सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र) है, वही मोक्ष का कारण है – ऐसा जानना। इस सम्बन्ध में श्री कुन्दकुन्द स्वामी कहते हैं –

**व्रत नियम को धारे भले, तप शील को भी आचरे।**
**परमार्थ से जो बाह्य वह, निर्वाण प्राप्ति नहिं करे।।**

अन्तर में जिसको शुद्धात्मा का ज्ञान नहीं अर्थात् जो अज्ञानरूप ही वर्तता है, ऐसा जीव व्रत-तप आदि शुभ कर्म करते हुए भी मोक्ष को नहीं पाता, इसलिए शुभ कर्म मोक्ष का कारण नहीं है। शुद्धात्मा के अनुभव से ज्ञानरूप हुआ ज्ञानी, व्रतादि शुभ कर्म न होने पर भी ज्ञान परिणमन से मोक्ष को पाता है, इसलिए ज्ञान ही मोक्ष का कारण है। ज्ञान परिणमन में सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र तीनों समा जाते हैं, किन्तु उसमें व्रतादि का शुभराग नहीं समाता, क्योंकि वह ज्ञान से भिन्न है। ऐसे ज्ञानमय मोक्षकारण को जो नहीं जानते वे अज्ञान से पुण्य को मोक्ष का कारण मानते हैं अर्थात् वे राग का ही सेवन करते हैं, ज्ञान का सेवन नहीं करते। भाई ! राग का सेवन तो संसार का ही कारण है, उसे तू मोक्ष का साधन मानता है, वही अज्ञान है, ऐसा साधन तो तूने अनन्त बार किया है, फिर भी मोक्ष क्यों नहीं पाया ? मोक्ष का सच्चा साधन आत्मा का सम्यग्ज्ञान है – ऐसा समझकर उस ज्ञान का सेवन करो। ज्ञान चेतनारूप धर्म ही भूतार्थ धर्म है, वही कर्म से छूटने का कारण है। शुभ कर्मरूप कर्मचेतना तो कर्मबंध और संसार भोग का कारण है, वह मोक्ष का कारण नहीं है। अरे भाई ! मोक्ष के सच्चे मार्ग को तू जान ! अपने सुख के सच्चे उपाय को तो पहिचान।

शास्त्र पठन करते हुए और पंच महाव्रत पालते हुए अज्ञानी जीव शुद्धात्मा के

ज्ञान-श्रद्धान से शून्य है और ज्ञान-श्रद्धानरूप बीज के बिना चारित्ररूप वृक्ष कहाँ से उगेगा ? चारित्र का मूल तो शुद्धात्मा का ज्ञान-श्रद्धान ही है और वह अज्ञानी के नहीं है। अरे ! जहाँ ज्ञान का अनुभव नहीं और रागरूप परिणमन ही वर्तता है, वहाँ शास्त्र पठन अथवा व्रत-महाव्रत से भी जीव को क्या लाभ ? उसमें ज्ञानचेतनारूप आत्मा तो आया ही नहीं और आत्मा के ज्ञान-श्रद्धान अनुभव बिना सुख होगा ही कहाँ से ? भाई, तू ज्ञान की कीमत करके आत्मा को जान। राग से भिन्न पड़कर ज्ञान-चेतनारूप होकर आत्मा का स्वाद ले। राग का तो अनन्तकाल से तूने अनुभव किया है, अब राग से पार चैतन्य का स्वाद तो ले। एक बार तो इस चैतन्य का मधुर स्वाद चख ले। इसी से तुझे वीतराग-विज्ञानरूप सच्चा सुख मिलेगा, ऐसा कोई अपूर्व सुख होगा जो राग में कभी अनुभव में नहीं आया। अन्तर में राग से पार चैतन्य सुख का स्वाद कैसा है, उसके अनुभव का पुन: पुन: अभ्यास करना चाहिए। आत्मा की सच्ची लगन से ऐसा अभ्यास करने पर अन्दर अवश्य अनुभव होगा और भवदु:ख का नाश होगा।

जिस अज्ञानी ने अंग पढे, उसके पंच महाव्रत आगमानुकूल थे, उसके माने हुए देव-शास्त्र-गुरु तीनों सच्चे थे, उसे कुदेव-कुगुरु-कुमार्ग की श्रद्धा स्वप्न में भी नहीं आता। कुदेवादिक को माननेवाले को तो अंग का ज्ञान होता ही नहीं। वह जैनमार्ग के अतिरिक्त अन्य मार्ग को स्वप्न में भी नहीं होती, वह जैनमार्ग के व्यवहार में आया, किन्तु अन्दर आत्मा की तरफ ज्ञान को झुकाकर आत्मा को नहीं जाना, अत: अज्ञानी ही रहा, परमार्थ से बाहर ही रहा अर्थात् मोक्ष के मार्ग में नहीं आया। उसने शास्त्रों को तो पढा, परन्तु निजात्मा को नहीं जाना, इसलिए उसे लेश भी सुख नहीं मिला, अत: उसका शास्त्र-पठन भी वास्तव में निष्फल ही गया। शास्त्र-पठन का वास्तविक फल तो यह था कि ज्ञानमय शुद्धात्मा को जानकर आनन्द का वेदन हो – यह फल तो उसे प्राप्त हुआ ही नहीं। अरे ! अपनी दृष्टि स्वयं ही न बदले तो शास्त्र भी क्या करे? अतीन्द्रिय आनन्द आत्मा में है, उसकी सन्मुखता बिना जीव ने किंचित् भी सुख नहीं पाया अर्थात् मात्र दु:ख ही पाया।

पुण्य करके भी दु:ख ही पाया ? हाँ, राग में तो दु:ख ही है न। राग भले शुभ हो, परन्तु उस राग में सुख तो नहीं मिलता, राग तो दु:ख ही है। राग से पार चैतन्य तत्त्व है, वह स्वयं सुख का सागर है, उसके ज्ञान से सुख मिलता है। ज्ञान का अर्थ





है स्वसन्मुख होकर उसका अनुभव करना। शास्त्र पढ-पढकर भी जो स्वसन्मुख नहीं हुआ और शुद्धात्मा लक्षगत नहीं किया तो उस जीव ने क्या पढा ? शास्त्र तो बतलाना चाहते हैं, उस ज्ञानमय आत्मा को तो लक्ष्य में लिया ही नहीं। अनन्त सुख का धाम आत्मा स्वयं है, उसमें उतरकर उस सुख का एक अंश भी चखे तब तो संसार का अन्त ही आ जावे। राग से भिन्न पड़कर ज्ञान-चेतनारूप हो तभी चैतन्य सुख का स्वाद आवे। अनन्त सुखमय चैतन्य का अनुभव करने से सुख का अंश जिसने चखा, वह पूर्ण सुख अवश्य प्राप्त करेगा।

ऐसा सुख सम्यग्ज्ञान से ही होता है और उसे प्रकट करने से परिभ्रमण का दु:ख मिट जाता है। एक क्षण भी चैतन्य का सुख चखे तो अनन्त काल संसार की थकान मिट जाय। अहा ! जिस चैतन्य के सन्मुख होने पर ऐसा अपूर्व अतीन्द्रिय परम सुख अनुभव में आया, वह अल्प सुख भी ऐसा अलौकिक है तो पूर्ण सुख की क्या बात ? चैतन्य का स्वभाव स्वयं अलौकिक सुख का सागर है – ऐसा धर्मी जानता है। अहा, यह अलौकिक चैतन्य तत्त्व, पूर्ण सुख का समुद्र, उसकी अलौकिक महिमा की बात क्या? ऐसे आत्मा के सन्मुख होकर स्वयं अपना ज्ञान करना वही परम सुख है। इसके बिना जीव चाहे जितना क्रियाकाण्ड करे, परन्तु सुखी नहीं हो सकता। **(क्रमश:)**

## बैंक में पैसा जमा कराने वालों से निवेदन

जो भी साधर्मीजन टोडरमल स्मारक ट्रस्ट हेतु साहित्य की/दान की राशि सीधे बैंक में जमा कराते हैं, उनसे निवेदन है कि वे जमा राशि की सूचना फोन/पत्र/एस.एम.एस./वॉट्स अप/ई-मेल द्वारा जयपुर कार्यालय को भेजने का कष्ट करें। ताकि उसका जमाखर्च कर उसकी रसीद आपको भेजी जा सके। RTGS/NIFT/Check/Cash संस्था के बैंक खाते में जमा करा सकते हैं। खाते का विवरण निम्नानुसार है -

| | | |
|---|---|---|
| Name of Account | : | **पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट** |
| Bank A/c No. | : | 0247000100024619 |
| Accounts Type | : | Saving A/c |
| Name & Address of Bank | : | PNB Bank, Bapu Nagar Branch |
| Bank Micr Code | : | 302024004 |
| Bank IFSC Code | : | PUNB0024700 |
| PAN NO. | : | AAATP2595H |

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, ए-4, बापूनगर, जयपुर-302015 (राज.)
फोन : (0141) 2705581, 2707458 E-mail - ptstjaipur@yahoo.com

**नियमसार प्रवचन –**

## आदाननिक्षेपण समिति का स्वरूप

परमपूज्य सर्वश्रेष्ठ दिगम्बराचार्य कुन्दकुन्द के प्रसिद्ध परमागम नियमसार के शुद्धभावाधिकार की 64वीं गाथा पर हुये आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजीस्वामी के अध्यात्मरस गर्भित प्रवचनों का संक्षिप्त सार यहाँ दिया जा रहा है।

छंद मूलत: इसप्रकार है –

**पोत्थइकमंडलाइं गहणविसग्गेसु पयतपरिणामो।**
**आदावणणिक्खेवणसमिदी होदि त्ति णिद्दिट्ठा।।६४।।**

( हरिगीत )

**पुस्तक कमण्डल संत जन नित सावधानीपूर्वक।**
**आदाननिक्षेपणसमिति में ग्रहण-निक्षेपण करें।।६४।।**

पुस्तक, कमण्डल आदि रखने-उठाने संबंधी प्रयत्न परिणाम आदाननिक्षेपण समिति है – ऐसा कहा गया है।

**(गतांक से आगे....)**

मुनि के पास उपकरणरूप में मात्र शास्त्र, कमण्डल और मोरपिच्छी – यह तीन ही होते हैं, इनसे अधिक नहीं होते। मुनि जब सातवीं भूमिका में अपने पुरुषार्थ की मंदता के कारण विशेष नहीं ठहर पाते और उससे गिरकर छठी भूमिका में आते हैं तब उनके उपकरणों को सावधानीपूर्वक रखने-उठाने के विकल्प उठते हैं। उनके अन्दर आत्मा का यथार्थ भान है, वे जानते हैं कि आत्मा शास्त्रादि जड़ पदार्थों को रख– उठा सकता नहीं; परन्तु अभी अपूर्णता होने से इस भूमिका में ऐसे विकल्प उठते हैं। अन्दरस्वभाव के भानपूर्वक वीतरागी रमणता विशेष वृद्धिंगत हुई है, फिर भी अपूर्णता है इसलिए विकल्प भी उठता है, वह विकल्प पुण्य है – वह धर्म अथवा धर्म का कारण नहीं है, यह व्यवहारसमिति है।

अपवादसंयमवाले मुनि को अपहृतसंयमी कहते हैं। अन्तरभानसहित रमणता तो प्रकटी है; किन्तु पुरुषार्थ की निर्बलता से विकल्प उठता है, अतः सातवीं भूमिका से च्युत हो जाते हैं, तब विकल्पयुक्त होने के कारण उन मुनि को अपहृतसंयमी





कहते हैं। अपवाद, व्यवहारनय, एकदेशपरित्याग, हीनसंयम, सरागचारित्र और शुभोपयोग – इन सबका एक ही अर्थ है। अन्दरस्वभाव प्रकट हुआ है वह निश्चय है और विकल्प – राग उठता है वह व्यवहार है। श्रद्धा-ज्ञान का निश्चय तो चौथे गुणस्थान में ही प्रकट हो गया है, किन्तु चारित्र अपेक्षा से निर्विकल्प स्वरूपरमणता-रूप निश्चय सातवें गुणस्थान में होता है। शुभोपयोगी मुनि को – छठी भूमिका में वर्तते मुनि को संयम, ज्ञान तथा शौच के उपकरण – पीछी, शास्त्र और कमण्डल रखते-उठाते समय विकल्प का प्रकार यहाँ बताया है।

सातवीं भूमिका में स्थिर हो गए हों उन्हें तो वे उपकरण होते नहीं, अर्थात् उन संबंधी विकल्प उनको उठता नहीं – उपेक्षा वर्तती है; अतः उन्हें उपेक्षासंयमी कहा गया है।

उपेक्षासंयमवाले मुनि को उपेक्षासंयमी कहते हैं। उत्सर्ग, निश्चयनय, सर्वपरित्याग, उपेक्षासंयम, वीतरागचारित्र और शुद्धोपयोग इन सबका एक अर्थ है। उपेक्षासंयमवाले मुनि अत्यन्त निस्पृह होते हैं। वे मुनि चल रहे हों तब भी सातवीं भूमिका बार-बार आ जाती है। उससमय उनको विकल्प नहीं होता। शरीर की क्रिया शरीर के कारण चलनेरूप होती है। अभ्यन्तर उपकरणभूत निजशुद्ध चैतन्यतत्त्व के अतिरिक्त अन्य कुछ भी उन्हें उपादेय नहीं है – ऐसी दशा सातवें गुणस्थान में ठहरने पर होती है। छठे गुणस्थानवाले को भी सहज एक अखण्ड ज्ञानस्वभाव के अतिरिक्त अन्य कुछ भी उपादेय नहीं है, किन्तु पर्याय में किंचित् विकल्प उठता है, जबकि सातवें में बिल्कुल ठहर गए होते हैं।

आत्मा जानने-देखने के स्वभाववाला त्रिकाल पदार्थ है। पर के ग्रहण-त्याग की क्रिया से तथा राग से उसका स्वरूप भिन्न है – ऐसे स्वरूप का भान तो छठे वाले को है, परन्तु निर्बलता के राग के कारण उपकरण संबंधी विकल्प उठता है। सातवें में जो ठहर गया है उसके कोई उपकरण नहीं है। छठे वाले को उपादेयबुद्धि तो सहजज्ञान की है, किन्तु विकल्प उठता है इसलिए उसको परमागम-भगवान की ध्वनि में से निकला हुआ सार – षट्खण्डागम, समयसार, प्रवचनसार आदि शास्त्र, जो पुनः पुनः पदार्थ के स्वरूप का प्रत्यभिज्ञान होने में निमित्तभूत हैं – वे ज्ञान का उपकरण हैं। मलोत्सर्ग करने के बाद शौच का उपकरण कमण्डल है। मुनिराज

दिन में एकबार ही आहार करते हैं। आहार के लिए जावें तभी श्रावक प्रासुक-अचित्त-उष्णजल कमण्डल में भर देता है, उस कमण्डल का जल मात्र शौच के लिए होता है, तृषा आदि से प्राण जावें तो भी कमण्डल का जल पी लेने का भाव मुनि को नहीं होता। संयम का उपकरण मोरपीछी है। यह सभी मुनि को रखने पड़ते हैं न ? अरे ! रखे कौन ! जड़ की क्रिया मैं कर सकता हूँ – ऐसा मुनिराज मानते ही नहीं। राग उठता है वहाँ सहज ही जो होता है उसका ज्ञान कराया है।

मुनि को इन तीन उपकरणों सम्बन्धी विकल्प होता है, वह भी मात्र छठी भूमिका में ही, सातवीं में तो स्वरूप में स्थिर होने पर उनकी भी उपेक्षा हो जाती है।

यह पक्षपात की बात नहीं है, वस्तुस्वरूप ही – मुनिदशा का स्वरूप ही ऐसा है, यही सनातन वीतराग मार्ग है। महाविदेहक्षेत्र में भी यही अनादि सनातन मार्ग है। इसमें कोई इधर-उधर करे तो चल नहीं सकता। भगवान कुन्दकुन्ददेव ने भी ऐसा ही कहा है।

इन उपकरणों के ग्रहण-त्याग के समय उठने वाली प्रयत्न-परिणामरूप विशुद्धि-शुभराग ही आदाननिक्षेपण समिति है – यह व्यवहार है। निश्चय से सहज परमतत्त्व के भानसहित अन्तरस्थिरतारूप निरुपाधिक परिणति प्रकटी, वही समिति है। यहाँ छठे की व्यवहारसमिति कही है। चौथेवाले को चौथे प्रमाण होती है; उसको जितना राग है उसी प्रमाण में शुभाशुभ विकल्प होते हैं। वह भूमिका कमजोर है, अतः भरत आदि को युद्ध का भाव हुआ था। यहाँ छठे गुणस्थान के शुभराग का वर्णन है, सर्वथा राग का अभाव तो बारहवें गुणस्थान में जाकर होता है।

( मालिनी )

**समितिषु समितीयं राजते सोत्तमानां**
**परमजिनमुनीनां संहतौ क्षांतिमैत्री।**
**त्वमपि कुरु मनःपंकेरुहे भव्य नित्यं**
**भवसि हि परमश्रीकामिनीकांतकांतः ।।८७।।**

( हरिगीत )

**उत्तम परमजिन मुनि के सुख-शान्ति अर मैत्री सहित।**
**आदाननिक्षेपण समिति सब समितियों में शोभती ।।**





**हे भव्यजन ! तुम सदा ही इस समिति को धारण करो।**
**जिससे तुम्हें भी प्राप्त हो प्रियतम परम श्री कामिनी ।। ८७ ।।**

उत्तम परमजिनमुनियों की यह समिति समितियों में शोभती है। उसके संग में क्षांति और मैत्री होते हैं (अर्थात् इस समितियुक्त मुनि को धीरज-सहनशीलता-क्षमा और मैत्रीभाव होते हैं)। हे भव्य! तू भी मन-कमल में सदा वह समिति धारण कर, जिससे तू परमश्रीरूपी कामिनी का प्रिय कान्त होगा (अर्थात् मुक्तिलक्ष्मी का वरण करेगा)।

छठे गुणस्थान की बात है। मुनि को उत्तम परम जिनमुनि कहा, क्योंकि वीतराग मार्ग के अतिरिक्त अन्यत्र कहीं यह बात नहीं होती, अन्य मतावलम्बी तो अपनी कल्पना से बात करते हैं, वहाँ ऐसे वीतरागी मुनि का स्वरूप नहीं हो सकता। उत्तम और परम विशेषण कहकर यहाँ भावलिंग सूचित किया है। ऐसी समितियुक्त मुनि को विशेष धैर्य और परम सहनशीलता प्रकट हो जाती है। घोरताप अथवा अतिशीत में हों तथापि मुनि अपने चैतन्य के अवलम्बन में परमशान्त – अव्याकुल दशा का ही अनुभवन करते हैं। उन्हें सर्व के प्रति मैत्रीभाव होता है। कोई निन्दा करे तो बैर और प्रशंसा करे तो स्नेहबुद्धि नहीं होती; क्योंकि वे जानते हैं कि कोई किसी को लाभ-हानि कर ही नहीं सकता – इसप्रकार अन्तरंग शान्ति मुनि के होती है। अतः हे भव्य ! तू भी उस समिति को मन-कमल में सदा धारण कर ! उससे परम केवलज्ञानरूपी स्त्री का प्रियकान्त होगा, तेरी पूर्णशुद्धपरिणतिरूपी स्त्री सदा तेरे साथ रहेगी और पुनः अवतार नहीं लेगा। ●


## पाठकों से निवेदन

हमारे यहाँ से वीतराग-विज्ञान (मासिक) पत्रिका निकलती है, जिसके हजारों पाठक देश-विदेश में है। इसके कवर पृष्ठ पर प्रतिमाह अलग-अलग दिगम्बर जैन तीर्थक्षेत्रों/मन्दिरों की फोटो प्रकाशित की जाती है। आपसे निवेदन है कि आप अपने क्षेत्र की सुन्दतम आकर्षक फोटो (शिखर सहित) भेजें, ताकि हम समयानुसार उसे छाप सकें। मन्दिर का फोटो डाक द्वारा निम्न पते पर या सॉफ्टकॉपी ई-मेल द्वारा भेज सकते हैं।

पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, ए-4, बापूनगर, जयपुर-302015 (राज.)
फोन : (0141) 2705581, 2707458 **E-mail - ptstjaipur@yahoo.com**

# ज्ञान गोष्ठी

सायंकालीन तत्त्वचर्चा के समय विभिन्न मुमुक्षुओं द्वारा
पूज्य स्वामीजी से पूछे गये प्रश्न और स्वामीजी द्वारा दिये गये उत्तर

**प्रश्न :** आत्मा में होनेवाले शुभाशुभभावों का मूल उपादान कौन है ?

**उत्तर :** अशुद्ध उपादान से आत्मा स्वयं शुभाशुभभावों में व्यापक होकर कर्त्ता होने से स्वयं (आत्मा) उनका कर्त्ता है। जब शुद्ध उपादान से देखें तो पुण्य-पाप भाव आत्मा का स्वभावभाव न होने से और वह शुभाशुभभाव पुद्गल के लक्ष से होता होने से पुद्गल का कार्य है। पुद्गल उसमें व्यापक होकर कर्त्ता होता है। जब स्वभाव के ऊपर दृष्टि जाती है, तब ज्ञानी योग और उपयोग का (राग का) स्वामी न होने से उसका (राग का) कर्त्ता नहीं है; किन्तु ज्ञानी के ज्ञान में राग निमित्त होता है।

**प्रश्न :** प्रत्येक द्रव्य का परिणमन स्वतंत्र और निरपेक्ष है, तो भी जब जीव को राग होता है, तभी परमाणु कर्मरूप से परिणमन क्यों करता है ?

**उत्तर :** जीव को राग हुआ, उससे परमाणु कर्मरूप से परिणमित नहीं हुआ है; किन्तु परमाणु के कर्मरूप से परिणमित होने का वही स्वकाल होने से जीव के राग की अपेक्षा बिना ही स्वतंत्ररूपेण परमाणु कर्मरूप से परिणमन करता है। ऐसा ही निमित्त-नैमित्तिक संबंध सहज है। यह बहुत सूक्ष्म बात है। निमित्त-नैमित्तिक संबंध की सहजता का अज्ञानी को भान न होने से ही उसे दो द्रव्यों में कर्त्ता-कर्मपने का भ्रम होता है। किसी भी द्रव्य के परिणमन को पर की अपेक्षा ही नहीं है; क्योंकि प्रत्येक द्रव्य स्वतंत्र ही परिणमन कर रहा है।

**प्रश्न :** जीवद्रव्य अन्य द्रव्यों द्वारा उपकृत होता है – ऐसा शास्त्रों में कथन आता है। कृपया खुलासा कीजिए ?

**उत्तर :** शास्त्रोल्लेख में व्यवहार के कथन से ऐसे आता है कि इस जीव का अन्य द्रव्य उपकार करते है। इसका अभिप्राय ऐसा है हि एक द्रव्य के कार्यकाल में दूसरे द्रव्य की पर्याय निमित्तमात्र-उपस्थितिमात्र धर्मास्तिकायवत् है – ऐसा ही इष्टोपदेश ग्रन्थ में कहा है तथा समयसार गाथा दो में भी कहा है कि प्रत्येक द्रव्य अपने ही गुण-पर्यायों का स्पर्श करता है; किन्तु दूसरे किसी भी द्रव्य को स्पर्श नहीं करता है। एक





द्रव्य की पर्याय में दूसरे द्रव्य की पर्याय का तो अत्यन्त अभाव है, ऐसी वस्तुस्थिति में भला एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का क्या करे ?

**प्रश्न :** द्रव्य ही उपादानकारण हो सकता है, पर्याय नहीं; यह मान्यता बराबर है या नहीं ?

**उत्तर :** पर्याय उपादानकारण न हो सके और मात्र द्रव्य ही उपादानकारण होवे – यह मान्यता बराबर नहीं है। द्रव्यार्थिकनय से उपादानकारण द्रव्य है – यह बात बराबर है; क्योंकि प्रत्येक पर्याय द्रव्य और गुण का ही परिणमन है और उससे इतना सूचित होता है कि यह पर्याय इस द्रव्य की है।

**दृष्टान्त –** मिट्टी में घट बनने की योग्यता सदा है - ऐसा बतलाना द्रव्यार्थिकनय है अर्थात् मिट्टी का घड़ा मिट्टी से ही हो सकता है, अन्य द्रव्य में से नहीं हो सकता। इनके विपरीत जब पर्यायार्थिकनय से कथन किया जाये अर्थात् जब पर्याय की योग्यता बतलाना हो तब प्रत्येक समय की योग्यता उपादानकारण है और वह पर्याय स्वयं कार्य है। यदि सूक्ष्मता से विचार किया जाये तो कारण-कार्य एक ही समय में होता है। (देखो - तत्त्वार्थसार, मोक्ष अधिकार, गाथा-35 तथा उसका अर्थ) इसका अर्थ ऐसा है कि प्रत्येक समय प्रत्येक द्रव्य में एक ही पर्याय होने की योग्यता है; किन्तु उसके पूर्व समय की अथवा उत्तर समय की पर्याय में वह योग्यता नहीं होती है। यह कथन पर्यायार्थिकनय से समझना।

**प्रश्न :** धर्म का निमित्त किसको होता है ?

**उत्तर :** अज्ञानी जीव में तो धर्मभाव प्रकट ही नहीं हुआ है; इसलिए उसको तो धर्म का निमित्त कोई है ही नहीं; क्योंकि कार्य हुए बिना निमित्त किसका ? अज्ञानी के धर्मरूप कार्य अपने में हुआ नहीं है; अत: धर्म के निमित्त का भी उसको निषेध वर्तता है। ज्ञानी ने अन्तरस्वभाव के भान से अपने भाव में धर्म प्रकट किया है, इसलिए उसको ही धर्म के निमित्त होते हैं; परन्तु उसकी दृष्टि में निमित्तों का निषेध वर्तता है और स्वभाव का आदर वर्तता है।

इसप्रकार निमित्त के कारण धर्म होता है - ऐसा जो मानता है, उसके तो धर्म के निमित्त ही नहीं होते। और जिसको धर्म के निमित्त होते हैं, ऐसा ज्ञानी निमित्त के कारण धर्म होता है, ऐसा मानता नहीं है।

समाचार दर्शन -

# देशभर में शिक्षण शिविरों की धूम

**(1) झालरापाटन (राज.) :** यहाँ श्री कुन्दकुन्द प्रवचन प्रसारण संस्थान उज्जैन एवं आध्यात्मिक शिक्षण शिविर समिति पिड़ावा के संयुक्त तत्त्वावधान में तीर्थधाम मंगलायतन और सिद्धायतन आयोजकत्व में मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश, राजस्थान, महाराष्ट्र व कर्नाटक के 251 स्थानों पर बाल संस्कार शिविर का आयोजन किया गया, जिसमें से 101 स्थानों का संयोजन पण्डित सुरेशचंदजी भिण्ड द्वारा किया गया।

शिविर का सामूहिक समापन समारोह दिनांक 18 जून को झालरापाटन में हुआ, जिसमें मुख्य अतिथि के रूप में श्री प्रेमचंदजी बजाज कोटा, श्री जयकुमारजी कोटा, श्री सुरेन्द्रजी जैन कोटा इत्यादि अनेक महानुभावों के साथ पण्डित विमलचंदजी झांझरी उज्जैन, पण्डित प्रदीपजी झांझरी उज्जैन, पण्डित रतनजी शास्त्री कोटा, पण्डित धर्मचंदजी जयथल एवं पण्डित विक्रांतजी पाटनी झालरापाटन आदि अनेक विद्वत्गण मंचासीन थे।

मंचासीन अतिथियों द्वारा पण्डित अमितजी जैन अरिहंत द्वारा संकलित /संपादित टेबल कैलेण्डर का विमोचन भी किया गया, जिसका प्रकाशन श्री कुन्दकुन्द प्रवचन प्रसारण संस्थान उज्जैन द्वारा ही किया गया।

इस शिविर के मुख्य संयोजक श्री अमितजी जैन अरिहंत, पण्डित अक्षयजी चव्हाण, पण्डित नीलेशजी घुवारा एवं पण्डित नितिनजी शास्त्री झालरापाटन थे।

संपूर्ण कार्यक्रम का संचालन ट्रस्ट के महामंत्री पण्डित नागेशजी जैन पिड़ावा ने किया।

**(2) सनावद (म.प्र.) :** यहाँ दिग. जैन पोरवाड़ धर्मशाला में कवरचंद ज्ञानचंद पारमार्थिक ट्रस्ट एवं मुमुक्षु मण्डल के संयुक्त तत्त्वावधान में दिनांक 7 से 14 जून तक तृतीय बाल-युवा-प्रौढ संस्कार/शिक्षण शिविर तथा श्री सिद्धचक्र मण्डल विधान का भव्य आयोजन किया गया।

इस अवसर पर ब्र. सुनीलजी शास्त्री शिवपुरी, पण्डित अनिलजी शास्त्री भिण्ड, पण्डित रितेशजी शास्त्री सनावद, पण्डित अशोकजी उज्जैन, विदुषी राजकुमारीजी दिल्ली, विदुषी प्रमिला जैन इन्दौर एवं आत्मार्थी कन्या विद्यालय दिल्ली की छात्राओं द्वारा प्रवचनों एवं कक्षाओं का लाभ मिला। सिद्धचक्र विधान पूजा एवं जयमाला का अर्थ ब्र. जतीशचंदजी शास्त्री दिल्ली ने समझाया। प्रतिदिन शिक्षाप्रद व सदाचारमय सांस्कृतिक कार्यक्रमों का भी आयोजन हुआ।

शिविर में बच्चों एवं युवाओं को धार्मिक शिक्षा एवं सदाचार के संस्कार दिये गये, जिनका लगभग 450 साधर्मियों ने धर्मलाभ लिया।

विधि-विधान के समस्त कार्य ब्र.जतीशचंदजी शास्त्री दिल्ली के निर्देशन में पण्डित अशोकजी उज्जैन, दिनेशजी कासलीवाल एवं आदित्यकुमारजी सनावद के सहयोग से संपन्न हुये। **- दिनेशचंद जैन, सनावद**

**(3) रायपुर (छत्तीसगढ) :** यहाँ अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन छत्तीसगढ के





तत्त्वावधान में द्वितीय जैनत्व जागरण संस्कार शिविर का आयोजन दिनांक 28 मई से 2 जून तक छत्तीसगढ के 10 स्थानों पर किया गया, जिसमें शंकरनगर रायपुर, चूड़ीबाजार रायपुर, बिजरी, जनकपुरी, बलौदाबाजार, दुर्ग, जगदलपुर, जैतहरी, खैरागढ, मनेन्द्रगढ आदि स्थानों पर लोगों ने अत्यंत उत्साहपूर्वक जैनत्व के संस्कार ग्रहण किये।

शिविर में श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धांत महाविद्यालय जयपुर, आचार्य अकलंक शिक्षण संस्थान बांसवाड़ा एवं आचार्य धरसेन सिद्धांत महाविद्यालय कोटा के विद्वानों का समागम प्राप्त हुआ, जिसमें ब्र.नन्हे भैया सागर, पण्डित राजेशजी शास्त्री गढा, पण्डित अभिषेकजी शास्त्री मड़देवरा, पण्डित शनिजी शास्त्री खनियांधाना, पण्डित दीपकजी शास्त्री मड़देवरा, पण्डित विवेकजी शास्त्री मड़देवरा, पण्डित आशीषजी शास्त्री भगवां, पण्डित आशीषजी शास्त्री मड़देवरा, पण्डित नवीनजी शास्त्री उज्जैन, पण्डित अंकितजी शास्त्री खड़ैरी, पण्डित सनतजी शास्त्री बकस्वाहा, पण्डित मयंकजी शास्त्री बंडा द्वारा विभिन्न कक्षाओं एवं प्रवचनों के माध्यम से जैनत्व के संस्कारों का बीजारोपण किया गया।

शिविर में लगभग 500 साधर्मियों ने धर्मलाभ लिया। शिविर का संयोजन श्री अशोकजी जैन घुवारा एवं पण्डित नितिनजी शास्त्री खड़ैरी ने किया।

# अमेरिका में धर्मप्रभावना

**(1) शिकागो :** यहाँ दिनांक 2 से 8 जून तक डॉ. संजीवकुमारजी गोधा जयपुर द्वारा प्रतिदिन तत्त्वार्थसूत्र के आधार से चतुर्गति के दुखों का स्वरूप बताते हुए मोक्ष प्राप्ति के उपाय पर मार्मिक प्रवचनों का लाभ मिला। दिनांक 7 जून को विशेष रूप से पण्डित राजमलजी पवैया द्वारा रचित बृहत् शान्तिविधान का भव्य आयोजन किया गया।

**(2) डलास :** यहाँ जैन सोसायटी ऑफ नॉर्थ टेक्सास द्वारा दिनांक 8 से 15 जून तक डॉ. संजीवकुमारजी गोधा जयपुर के विशेष आध्यात्मिक प्रवचनों का लाभ मिला। इस अवसर पर प्रात: ग्रन्थाधिराज समयसार की गाथा 49 पर एवं सायंकाल तत्त्वार्थसूत्र के 5वें अध्याय पर मार्मिक प्रवचन हुये।

दिनांक 13 व 14 जून को विशेष शिविर का आयोजन किया गया, जिसमें तत्त्वार्थसूत्र के छठे अध्याय के आधार से विविध कर्मों के आस्रवों के कारण, गुणस्थान विवेचन के आधार से पांचवाँ, छठा व सातवाँ गुणस्थान तथा नयपद्धति व चार अनुयोग आदि विषयों पर 2 दिनों में लगभग 14 घंटे तत्त्वज्ञान की धारा बही।

**(3) मयामी-फ्लोरिडा :** यहाँ दिनांक 16 जून से 22 जून तक प्रतिदिन प्रात: 'अपूर्व अवसर' विषय पर एवं सायंकाल 'सात तत्त्व/नव पदार्थ' विषय पर मार्मिक प्रवचनों का लाभ मिला।

समस्त कार्यक्रमों में शताधिक लोगों ने धर्मलाभ लिया। कार्यक्रम का संयोजन व संचालन श्री अतुलभाई खारा ने किया।

# अटलांटा (अमेरिका) में शिविर संपन्न

**अटलांटा (अमेरिका) :** यहाँ जैन अध्यात्म अकेडमी ऑफ नॉर्थ अमेरिका (**JAANA**) द्वारा दिनांक 28 जून से 2 जुलाई 2015 तक 15वें आध्यात्मिक शिक्षण शिविर का भव्य आयोजन किया गया।

इस प्रसंग पर डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल द्वारा ग्रन्थाधिराज प्रवचनसार की गाथा 100 से 102 तक प्रतिदिन दो प्रवचनों के अतिरिक्त डॉ. संजीवकुमारजी गोधा जयपुर द्वारा क्रमबद्धपर्याय पर प्रतिदिन तीन प्रवचन एवं पण्डित विपिनजी शास्त्री मुम्बई द्वारा समयसार की गाथा 173 से 176 के आधार से उपयोग के प्रयोग विषय पर प्रतिदिन तीन प्रवचनों का लाभ मिला।

इसप्रकार प्रतिदिन 8 घंटे प्रवचनों के अतिरिक्त सायंकाल ज्ञानगोष्ठी का आयोजन भी किया गया, जिसमें आत्मार्थी मुमुक्षुओं की जिज्ञासाओं का समाधान उक्त तीनों विद्वानों के माध्यम से किया जाता था। प्रतिदिन प्रात: नित्य-नियम पूजन का कार्यक्रम भी हुआ। इसप्रकार प्रतिदिन लगभग 9-10 घंटे तत्त्वज्ञान की अखण्ड धारा प्रवाहित हुई। संपूर्ण कार्यक्रम में अमेरिका के विविध प्रांतों से पधारे शताधिक लोगों ने धर्मलाभ लिया। संपूर्ण कार्यक्रमों का सफल संयोजन एवं संचालन श्री अतुलभाई खारा डलास ने किया।

**अभूतपूर्व धर्मप्रभावना –** डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल जयपुर द्वारा दिनांक 12 जून से 15 जुलाई तक लन्दन, शिकागो, अटलांटा, डलास एवं न्यूजर्सी में अभूतपूर्व धर्मप्रभावना हुई। डॉ. संजीवकुमारजी गोधा जयपुर द्वारा दिनांक 2 जून से 5 जुलाई तक शिकागो, डलास, मियामी, ऑर्लेन्डो एवं अटलान्टा में प्रवचन एवं कक्षाओं का आयोजन हुआ।

इस वर्ष **पण्डित विपिनजी शास्त्री नागपुर** द्वारा दिनांक 28 जून से 25 जुलाई तक अटलांटा, शिकागो, क्लीवलैंड एवं डलास में मार्मिक प्रवचनों के माध्यम से अभूतपूर्व धर्मप्रभावना हुई।

# जैना कन्वेन्शन संपन्न

**अटलांटा (अमेरिका) –** यहाँ जैन एसोसिएशन इन नॉर्थ अमेरिका **(JAINA)** द्वारा प्रत्येक दो वर्ष में आयोजित होने वाला समग्र जैन समाज का महासम्मेलन इस वर्ष दिनांक 2 जुलाई से 5 जुलाई तक सम्पन्न हुआ।

इस सम्मेलन में जैनों के सभी सम्प्रदायों से लगभग चार हजार (4000) लोगों की उपस्थिति रही। इस महाप्रसंग पर अन्तरराष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त **डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल** के 'अहिंसा : महावीर की दृष्टि में' विषय पर दो मार्मिक प्रवचनों का लाभ मिला। साथ ही **डॉ. संजीवकुमारजी गोधा** जयपुर के 'जीवन जीने की कला' विषय पर दो प्रवचन हुये।

ज्ञातव्य है कि इस महासम्मेलन में भट्टारक चारुकीर्तिजी मूढबद्री एवं श्वेताम्बर जैनों के अनेक सम्प्रदायों के साधु-साध्वीगण भी उपस्थित थे।





# आध्यात्मिक विदुषी संगोष्ठी संपन्न

**दिल्ली :** यहाँ श्री दिगम्बर जैन मुमुक्षु मण्डल के स्वर्ण जयंती के पावन प्रसंग पर श्री दिगम्बर जैन कुन्दकुन्द कहान आत्मार्थी ट्रस्ट एवं अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन उस्मानपुर के संयुक्त तत्त्वावधान में स्वानुभूति महिला मण्डल द्वारा **'आत्मानुभूति : एक विवेचन'** विषय पर दिनांक 5 जुलाई को आध्यात्मिक विदुषी संगोष्ठी का आयोजन किया गया।

इस गोष्ठी में आत्मानुभूति के विभिन्न विषयों पर श्रीमती शिवानी जैन शास्त्री पार्क, डॉ. ममता जैन रोहिणी, ब्र. प्रज्ञा दीदी आत्मार्थी ट्रस्ट, आत्मार्थी नमन जैन बुद्ध विहार, श्रीमती देशना जैन उस्मानपुर, आत्मार्थी आयुषी जैन शाहदरा, आत्मार्थी पारुल जैन बहादुरगढ, आत्मार्थी प्रियंका जैन, कु. अनुभूति जैन ने अपने विचार व्यक्त किये। अंत में गोष्ठी के मुख्य अतिथि डॉ. वीरसागरजी जैन दिल्ली ने अपने विचार व्यक्त किये। मंगलाचरण कु. मेघा जैन एवं संचालन श्रीमती बिन्दु जैन ने किया। संपूर्ण गोष्ठी पण्डित ऋषभजी शास्त्री एवं पण्डित संदीपजी शास्त्री के कुशल निर्देशन में तथा पण्डित प्रयंकजी शास्त्री के संयोजकत्व में संपन्न हुई।

# सोनगढ में शास्त्री वर्ग प्रशिक्षण शिविर संपन्न

**सोनगढ (गुज.) :** यहाँ श्री दिगम्बर जैन कुन्दकुन्द कहान तीर्थसुरक्षा ट्रस्ट एवं श्री कुन्दकुन्द पारमार्थिक ट्रस्ट के संयुक्त तत्त्वावधान में दिनांक 15 से 19 जुलाई तक जयपुर, बांसवाड़ा एवं कोटा महाविद्यालय के शास्त्री वर्ग के विद्यार्थियों हेतु प्रशिक्षण शिविर संपन्न हुआ।

श्री टोडरमल दि. जैन सिद्धांत महाविद्यालय जयपुर, श्री अकलंक जैन न्याय महाविद्यालय बांसवाड़ा एवं आचार्य धरसेन जैन सिद्धांत महाविद्यालय कोटा के शास्त्री वर्ग के विद्यार्थियों को गुरुदेवश्री का जीवन एवं उनके द्वारा प्रतिपादित सूक्ष्म तत्त्व का परिचय कराने हेतु देश के उच्चकोटि के विद्वानों में पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली, पण्डित वीरेन्द्रकुमारजी आगरा, पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील जयपुर, डॉ. संजीवकुमारजी गोधा जयपुर, पण्डित चेतनभाई राजकोट, पण्डित रजनीभाई दोशी, पण्डित सुनीलजी जैनापुरे राजकोट, पण्डित नीलेशभाई मुम्बई के द्वारा कक्षाओं का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन विद्यार्थी गृह में कार्यक्रम का उद्घाटन श्री प्रेमचंदजी बजाज कोटा द्वारा हुआ। ध्वजारोहण श्री विपिनभाई बाधर जामनगर ने एवं अध्यक्षता श्री हंसमुखभाई ने की। विशिष्ट अतिथियों में आगन्तुक सभी विद्वत्गणों के अतिरिक्त श्री अनंतभाई मुम्बई, श्री बसंतभाई मुम्बई, श्री अमृतभाई मेहता फतेहपुर, श्री अजितभाई बड़ौदा, श्री आलोकजी कानपुर, श्री अशोकजी जबलपुर, श्री वीनूभाई शाह मुम्बई आदि महानुभाव मंचासीन थे।

शिविर में 'मुझे गुरुदेवश्री प्रिय क्यों लगते हैं' विषय पर गोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसमें अनेक वक्ताओं ने अपना वक्तव्य दिया। इस अवसर पर तीनों विद्यालयों के लगभग 150 विद्यार्थियों ने लाभ लिया। शिविर का संयोजन पण्डित विरागजी शास्त्री जबलपुर ने किया।

# हार्दिक बधाई !

**(1) मेरठ (उ.प्र.) निवासी श्री निशांत जैन** पुत्र श्री सुशील कुमार जैन ने आई.ए.एस. परीक्षा में देशभर में **13वाँ स्थान** एवं हिन्दी मीडियम में **प्रथम स्थान** प्राप्त किया है। आप वर्तमान में लोकसभा में राजभाषा अधिकारी के पद पर कार्यरत हैं। ज्ञातव्य है कि आप मेरठ युवा फैडरेशन के सक्रिय कार्यकर्ता हैं।

**(2)** श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धांत महाविद्यालय जयपुर के स्नातक डॉ. शुद्धात्मप्रकाश जैन ने **'के.जे. सोमैया सेन्टर फॉर स्टडीज इन जैनिज्म'** विद्याविहार मुम्बई में निदेशक के पद पर कार्यभार ग्रहण किया है।

ज्ञातव्य है कि मुम्बई विश्वविद्यालय से संबद्ध एवं विद्याविहार मुम्बई स्थित इस संस्था में जैनदर्शन से संबंधित प्रमाण-पत्र, डिप्लोमा, एडवांस डिप्लोमा, प्राकृत भाषा अध्ययन, एम.ए., पी.एच.डी. आदि पाठ्यक्रम चलाये जाते हैं, जो अत्यल्प शुल्क पर उपलब्ध हैं। इच्छुक व्यक्ति **संपर्क करें –** केबिन नं. 7 व 8, द्वितीय तल, के.जे. सोमैया मैनेजमेण्ट इंस्टीट्यूट बिल्डिंग, विद्याविहार, मुम्बई-400077,फोन-022-21023209, 67283074 E-mail : jaincentre@somaiya.edu

**(3)** श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धांत महाविद्यालय के स्नातक आशीष जैन टोंक, राहुल जैन नौगांव, जयेश जैन उदयपुर एवं नवीन जैन उज्जैन का उत्तरप्रदेश सरकार के शिक्षा विभाग में एल.टी. शिक्षक (टी.जी.टी. के समकक्ष) पद पर चयन हो गया है।

इस उपलब्धि हेतु जैनपथप्रदर्शक एवं टोडरमल महाविद्यालय परिवार की ओर से हार्दिक बधाई !

## दशलक्षण महापर्व हेतु सूचना

दशलक्षण महापर्व के अवसर पर प्रवचनार्थ विद्वानों को बुलाने हेतु पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट को आमंत्रण-पत्र समाज/मंदिर/संस्था के लेटर पेड पर शीघ्र भेजें; ताकि समय रहते उचित व्यवस्था की जा सके।

प्रवचनार्थ जाने वाले विद्वानों से अनुरोध है कि यदि उन्होंने अपनी स्वीकृति अभी तक नहीं भेजी है तो तत्काल जयपुर कार्यालय को पत्र/फोन/ई-मेल द्वारा भेजें।

यद्यपि सभी विद्वानों को जयपुर कार्यालय से अनुरोध पत्र भेजे गए हैं, परन्तु यदि डाक की गड़बड़ी से समय पर न मिले हो तो भी अपनी स्वीकृति हमें शीघ्र नोट करा देवें। **– मंत्री**

स्वीकृति भेजने का पता – **दशलक्षण पर्व व्यवस्था विभाग,**
**ज्ञानतीर्थ श्री टोडरमल स्मारक भवन, ए-4, बापूनगर, जयपुर (राज.) 302015**
**फोन नं.– 0141-2705581, 2707458, E-mail : ptstjaipur@yahoo.com**





श्री कुन्दकुन्द कहान दि. जैन तीर्थसुरक्षा ट्रस्ट, मुम्बई द्वारा

**ज्ञानतीर्थ श्री टोडरमल स्मारक भवन जयपुर में**

## 38वाँ आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर

**(रविवार, दिनांक 2 अगस्त से मंगलवार 11 अगस्त, 2015 तक)**

**शिविर में तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल एवं अन्य अनेक विद्वानों के प्रवचनों एवं कक्षाओं का लाभ प्राप्त होगा।**

**शिविर में जयपुर आने हेतु अपने टिकिट शीघ्र करा लेवें। कृपया आवास आदि की समुचित व्यवस्था हेतु अपने पधारने की पूर्व सूचना जयपुर कार्यालय को अवश्य भेजें।**

**शिविर में पधारने हेतु आप सभी सादर आमंत्रित हैं।**

# वनिता बोधिनी शिविर संपन्न

**करेली (उ.प्र.) :** यहाँ आध्यात्मिक प्रयोगशाला एवं कुन्दकुन्द कहान स्वाध्याय मंदिर के तत्त्वावधान में दिनांक 10 से 18 जून तक वनिता बोधिनी शिविर संपन्न हुआ।

इस अवसर पर गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के वीडियो प्रवचनों के अतिरिक्त ब्र. ममता दीदी टीकमगढ, ब्र. आरती दीदी छिन्दवाड़ा एवं ब्र. रजनी दीदी श्योपुर का का लाभ प्राप्त हुआ। रात्रि में सांस्कृतिक कार्यक्रमों का भी आयोजन हुआ।

# शोक समाचार

**मुजफ्फरनगर (उ.प्र.) निवासी श्रीमती शान्तिदेवी जैन** का शांतपरिणामोंपूर्वक देहावसान हो गया। आपकी स्मृति में जैनपथप्रदर्शक एवं वीतराग-विज्ञान हेतु 1600-1500/- रुपये प्राप्त हुये।

दिवंगत आत्मा चतुर्गति के दु:खों से छूटकर शीघ्र ही अनंत अतीन्द्रिय आनंद को प्राप्त हो - यही मंगल भावना है।

**पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के समस्त ऑडियो – वीडियो प्रवचन साहित्य एवं अन्य अनेक जानकारियों के लिये अवश्य देखें –**
**वेबसाईट – www.vitragvani.com**
**संपर्क सूत्र–श्री कुन्दकुन्द कहान पारमार्थिक ट्रस्ट, मुम्बई**
**Ph.: 022-26130820, 26104912, E-Mail- info@vitragvani.com**

## श्री वीतराग-विज्ञान विद्यापीठ परीक्षा बोर्ड

### श्री टोडरमल स्मारक भवन

ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राजस्थान)

### ग्रीष्मकालीन परीक्षा - कार्यक्रम -2015

| दिन व दिनांक | नाम ग्रन्थ |
|---|---|
| रविवार<br>16 अगस्त<br>2015 | 1. बालबोध पाठमाला भाग1 (बालबोध प्रथम खण्ड) मौखिक<br>2. जैन बालपोथी भाग 1 (मौखिक)<br>3. वीतराग-विज्ञान पाठमाला भाग1 (प्रवेशिका प्रथम खण्ड)<br>4. तत्त्वज्ञान पाठमाला भाग1<br>5. छहढाला (पूर्ण) 6. तत्त्वार्थसूत्र (मोक्षशास्त्र) पूर्वार्द्ध<br>7. मोक्षमार्गप्रकाशक (पूर्वार्द्ध)<br>8. जैन सिद्धान्त प्रवेशिका (गोपालदासजी बरैया कृत)<br>9. विशारद प्रथम खण्ड (प्रथम वर्ष) |
| सोमवार<br>17 अगस्त<br>2015 | 1. बालबोध पाठमाला भाग 2 (बालबोध द्वितीय खण्ड) मौखिक<br>2. जैन बालपोथी भाग 2 (मौखिक)<br>3. वीतराग-विज्ञान पाठमाला भाग 2 (प्रवेशिका द्वितीय खण्ड)<br>4. तत्त्वज्ञान पाठमाला भाग 2<br>5. द्रव्यसंग्रह (पूर्ण)<br>6. तत्त्वार्थसूत्र (मोक्षशास्त्र) उत्तरार्द्ध<br>7. लघु जैनसिद्धान्त प्रवेशिका (सोनगढ़)<br>8. मोक्षमार्गप्रकाशक (उत्तरार्द्ध)<br>9. विशारद द्वितीय खण्ड (प्रथम वर्ष)<br>10. विशारद प्रथम खण्ड (द्वितीय वर्ष) |
| मंगलवार<br>18 अगस्त<br>2015 | 1. बालबोध पाठमाला भाग 3 (बालबोध तृतीय खण्ड) मौखिक<br>2. वीतराग-विज्ञान पाठमाला भाग 3 (प्रवेशिका तृतीय खण्ड)<br>3. रत्नकरण्ड श्रावकाचार (पूर्ण)<br>4. पुरुषार्थसिद्ध्युपाय (पूर्ण)<br>5. विशारद द्वितीय खण्ड (द्वितीय वर्ष) |

**नोट -** (1) सुविधानुसार परीक्षा का समय प्रात: 9 से शाम 5 बजे के बीच कभी भी सैट कर सकते हैं।
(2) जहाँ एक से अधिक केन्द्र हों, वे आपस में मिलकर समय निश्चित करें।
(3) किन्हीं विषयों के छात्र आपस में टकराते हों तो परीक्षा सुविधानुसार दिन में दो बार ली जा सकती है।
(4) बालबोध पाठमाला भाग 1, 2, 3 और जैन बालपोथी भाग 1 व 2 की परीक्षायें मौखिक में लेवें। शेष सभी विषयों की परीक्षायें लिखित में लेवें। **- ओमप्रकाश आचार्य, प्रबंधक-परीक्षा बोर्ड**

तीर्थधाम ढाईद्वीप जिनायतन में बन रहे मेरु का दृश्य

R.N.I. No. 38278/83 *Postal Regd. No. JaipurCity/421/2015-17*

**ढाईद्वीप जिनायतन, इन्दौर**
**बढते चरण...**

तीर्थधाम ढाईद्वीप जिनायतन में दक्षिण शैली के सिंहद्वार का फोटो

सम्पादक :
**डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल**
शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., पीएच. डी.
सह-सम्पादक :
**डॉ. संजीवकुमार गोधा**
एम.ए.द्वय , नेट, एम. फिल (जैनदर्शन), पीएच.डी.
प्रकाशक एवं मुद्रक :
**ब्र. यशपाल जैन,** एम. ए.
द्वारा पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के लिये
जयपुर प्रिंटर्स प्रा.लि., जयपुर से
मुद्रित एवं प्रकाशित।

If undelivered please return to -- **Pandit Todarmal**
**Smarak Trust , A-4, Bapu Nagar, Jaipur - 302015**